इकाई 15

संख्या पञ्चदश

15.0 उद्देश्य

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय कोटा के संस्कृत भाषा का पाठ्यक्रम (बी0ए0 प्रथम वर्ष) के लिए इकाई संख्या 15 के अन्तर्गत ''अलंकार सम्प्रदाय के प्रमुख आचार्यों एवं उनके ग्रन्थों का सामान्य परिचय'' प्रस्तुत किया गया है। इस इकाई का अध्ययन करने के बादः

1. छात्र काव्यशास्त्र का सामान्य परिचय प्राप्त करेंगे।
2. छात्र अलंकार शब्द का अर्थ तथा काव्य में उनके महत्त्व के बारे में जानेंगे।
3. छात्र प्रमुख अलंकारवादी आचार्यों व उनकी रचनाओं के विषय में जान सकेंगे।
4. काव्यशास्त्र एवं काव्य–अवयवों के बारें में छात्रों में जिज्ञासा पैदा होगी।

15.1 प्रस्तावना

काव्य का स्वरूप व काव्यांगों का विवेचन करने वाले ग्रन्थ काव्यशास्त्रीय अथवा अलंकारशास्त्रीय ग्रन्थ कहलाते हैं। सर्वप्रथम भरतमुनि ने अपने ग्रन्थ नाट्य शास्त्र में काव्यशास्त्रीय–ग्रन्थ लेखन की

परम्परा का शुभारम्भ किया। इन्होंने काव्य में रस तत्त्व की प्रधानता बताते हुए रस सम्प्रदाय की स्थापना की। इसी काव्यशास्त्रीय परम्परा में भरतमुनि के बाद विविध परवर्ती विद्वानों ने काव्य के भिन्न–भिन्न तत्त्वों की प्रमुखता को प्रतिपादित करते हुए विविध काव्य–सम्प्रदायों का प्रतिपादन किया। इसी क्रम में भामह ने अपने ग्रन्थ काव्यालंकार में अलंकार को काव्य का प्रधान तत्त्व बताया और अलंकार सम्प्रदाय की स्थापना की। भामह के इसी मत को उद्भट, रूद्रट, दण्डी, अप्पय दीक्षित आदि विद्वानों ने आगे बढ़ाया।

15.2 अलंकार शब्द का अर्थ व लक्षण

अलंकार शब्द अलम् पूर्वक कृ धातु से घञ् प्रत्यय से निष्पन्न हुआ है जिसका अर्थ है– 'अलङ्क्रियते अनेनेति अलंकारः' अर्थात् जो किसी वस्तु की शोभा बढ़ाता है, वह अलंकार कहलाता है। जिस प्रकार स्वर्णादि आभूषणों या अलंकारों से कान्ता के मुख की शोभा बढ़ जाती है। उसी प्रकार अलंकारों के प्रयोग से काव्य की शोभा बढ़ जाती है। अत एव कहा गया है–

काव्यशोभाकरान् धर्मानलंकारान् प्रचक्षते।

अर्थात् काव्य की शोभा बढ़ाने वाले धर्म अलंकार कहलाते हैं।

अलंकार सम्प्रदाय का विकास–

वैसे तो अलंकारों का प्रयोग हमें ऋग्वेद की ऋचाओं में ही देखने को मिल जाता है। जिनमें विविध देवताओं की स्तुति का आलंकारिक वर्णन है पृथक् काव्यशास्त्रीय ग्रंथ में अलंकार का सर्वप्रथम वर्णन भरतमुनि के नाट्यशास्त्र से ही स्वीकार किया जाता है। भरतमुनि के बाद भामह ने 'काव्यालंकार' में अलंकारों की महत्ता को वर्णित कर एक पृथक् अलंकार सम्प्रदाय की स्थापना की।

अलंकार सम्प्रदाय व उसका महत्त्व–

जिस प्रकार आभूषणों से रहित स्त्री का सुन्दर मुख भी रोचक नहीं लगता है उसी प्रकार अलंकारों के बिना काव्य सुन्दर नहीं लगता है–

''न कान्तमपि निर्भूषं विभाति वनिता मुखम्''– भामह

रीति प्रवर्तक वामन ने भी सौंदर्य को अलंकार मानकर उसी के द्वारा काव्य की ग्राह्यता प्रतिपादित की है।

''काव्य ग्राह्यमलंकारात्। सौन्दर्यमलंकारः।'' – वामन

चन्द्रालोक के रचयिता जयदेव ने तो यहाँ तक कह डाला कि जो विद्वान् अलंकार रहित शब्दार्थ को काव्य स्वीकार कर सकते हैं वे अग्नि को भी अनुष्ण क्यों नहीं मान लेते–

अंगी करोति यः काव्यं शब्दार्थावनलंकृती।

असौ न मन्यते कस्मादनुष्णमनलं कृती।। –चन्द्रालोक

15.3 अलंकार सम्प्रदाय के प्रमुख आचार्य एवं उनके ग्रन्थों का परिचय

15.3.1 भरतमुनि

यद्यपि भरतमुनि रस सम्प्रदाय के प्रवर्तक थे तथा अलंकार सम्प्रदाय का प्रारम्भ भामह के काव्यालंकार से माना जाता है तथापि अलंकारों का सर्वप्रथम वर्णन भरतमुनि ने ही किया है।

इनका प्रमुख ग्रन्थ नाट्यशास्त्र है जिसमें 36 अध्यायों में रस, गुण, रीति, अलंकार आदि काव्यांगों का विशद् विवेचन किया गया है। नाट्यशास्त्र में प्रधानतया रस निरूपण ही है तथापि ग्रन्थ के सत्रहवें अध्याय में उपमा, दीपक, रूपक और यमक इन चार अलंकारों का वर्णन है।

15.3.2 भामह

भरत के बाद भामह का स्थान प्रमुख है। भामह अलंकार सम्प्रदाय के प्रवर्तक थे। यद्यपि भामह से पूर्व भी भरतमुनि ने उपमादि चार अलंकारों का वर्णन किया है। परन्तु काव्य के प्रधान तत्त्व तथा व्यापक रूप से अलंकारों का वर्णन भामह ने अपनी रचना काव्यालंकार में किया है तथा अलंकार सम्प्रदाय की नींव रखी।

परिचय व जीवन वृत– भामह ने अपने व्यक्तिगत जीवन के बारे में बहुत कम लिखा है तथापि परम्पराओं व अधिकांश विद्वानों के अनुसार भामह कश्मीर के निवासी थे। इनके पिता का नाम रक्रिलगोमिन् था। जो इनके बौद्ध होने को सूचित करता है परन्तु पर्याप्त साक्ष्यों के अभाव में यह कहना न्यायसंगत नहीं होगा अपितु भामह को ब्राह्मण धर्मानुयायी मानना ही अधिक सही है।

भामह का समय – भामह के समय के बारे मे भी विद्वानों में मतैक्य नहीं है। अधिकांश विद्वानों के मतों को मद्देनजर रखते इनका समय पांचवी से छठी सदी के बीच माना जा सकता है।

भामह की रचनाएँ – भामह का प्रमुख उपलब्ध ग्रन्थ काव्यालंकार है। इसके अतिरिक्त नारायणभट्ट की वृतरत्नाकर टीका से ज्ञात होता है कि इन्होंने छन्दशास्त्र पर ग्रन्थ लिखा होगा जो आज तक उपलब्ध नहीं है।

काव्यालंकार – काव्यालंकार अलंकार सम्प्रदाय का सर्वप्रथम ग्रन्थ है। इसमें 6 परिच्छेद हैं तथा 400 श्लोक हैं जिनमें 5 काव्यांगों का वर्णन है। यद्यपि भामह ने अपने ग्रन्थ में 400 श्लोक परिगणित करवाये है परन्तु इसमें कुल 398 श्लोक ही हैं। इसके परिच्छेदों का वर्णन इस प्रकार है–

प्रथम परिच्छेद – इसका नामक काव्य–शरीर–निर्णय है, जिसमें काव्य–प्रयोजन, प्रशंसा, साधन, लक्षण, भेद, गुण, दोषादि का वर्णन है।

द्वितीय परिच्छेद – अलंकृतीनिर्णय नामक इस परिच्छेद में माधुर्यादि तीन गुणों का वर्णन है।

तृतीय परिच्छेद – अलंकृतिनिर्णय नामक इस परिच्छेद में अलंकारों के लक्षण व उदाहरणों का विस्तृत विवेचन है।

चतुर्थ परिच्छेद – इसका नाम दोष निर्णय है। इसमें काव्य दोषों का वर्णन है।

पंचम परिच्छेद – न्याय निर्णय नाम वाले इस परिच्छेद में प्रमाण, प्रतिज्ञा, हेत्वादि शास्त्रीय विषयों का वर्णन है।

षष्टम परिच्छेद – इसका नाम शब्दशुद्धि है। इसमें भाषा व व्याकरण के नियमों का वर्णन है।

भामह के अनुसार काव्य प्रयोजन – काव्यप्रयोजन बताते हुए भामह ने लिखा है–

धर्मार्थाकाममोक्षाणां वैचक्षण्यं कलासु च।
प्रीतिं करोति कीर्तिं च साधुकाव्यानि बन्धनम्।।

अर्थात् धर्म–अर्थ–काम–मोक्ष चारों पुरूषार्थों की प्राप्ति–विभिन्न कलाओं में विदग्धता यशादि की प्राप्ति श्रेष्ठ काव्य से ही संभव है।

भामह का काव्य लक्षण– भामह के अनुसार शब्द और अर्थ से सहित काव्य होता है और वह काव्य प्रमुख रूप से दो प्रकार का होता है– गद्य और पद्य।

शब्दार्थौ सहितौ काव्यं गद्यं पद्यञ्च तद्विधा।

भामह का यह लक्षण काव्य का प्रथम प्रसिद्ध लक्षण माना जाता है।

भामह का अन्य विद्वानों पर प्रभाव – उद्भट ने काव्यलंकार पर भामह विवरण नामक टीका लिखी। इसके अलावा आनन्दवर्धन, दण्डी, उद्भट, मम्मट, रूय्यक, भोज, वामन, अप्पयदीक्षित, विश्वेश्व आदि ने भामह को उद्धृत किया है।

भामह और अलंकारों की संख्या – भामह ने अपने ग्रन्थ काव्यालंकार में कुल 38 अलंकारों का वर्णन किया है।

15.3.3 आचार्य दण्डी

संस्कृत काव्यशास्त्र के इतिहास में आचार्य दण्डी का महत्त्वपूर्ण स्थान है। दण्डी अलंकारशास्त्र के ही आचार्य नहीं थे, अपितु उत्कृष्ट कोटि के कवि भी थे। आचार्य दण्डी का पदलालित्य प्रसिद्ध है– ''दण्डिनः पदलालित्यं''।

दण्डी का समय सप्तम शताब्दी का उत्तरार्ध तथा अष्टम शताब्दी का पूर्वार्ध माना जाता है।

दण्डी का कर्तृत्व – दण्डी विरचित तीन ग्रन्थ प्रसिद्ध हैं। स्वयं राजशेखर ने दण्डीकृत तीन ग्रन्थों का उल्लेख किया है–

त्रयोऽग्नयस्त्रयो वेदास्त्रयो देवास्त्रयो गुणाः।
त्रयो दण्डिप्रबन्धाश्च त्रिषु लोकेषु विश्रुताः।।

दण्डीकृत ग्रन्थों के नाम ये हैं (1) काव्यादर्श, (2) दश कुमारचरित, (3) अवन्तिसुन्दरी कथा। इनमें दशकुमारचरित तथा अवन्तिसुन्दरी कथा दोनों गद्य काव्य हैं जिनमें दण्डी का पदलालित्य पद पद पर प्रस्फुटित होता है। काव्यादर्श काव्यशास्त्रीय ग्रन्थ है। यह दण्डी की अलंकारशास्त्र पर एक प्रौढ कृति है। इस ग्रन्थ में तीन परिच्छेद है।

प्रथम परिच्छेद – इसके प्रथम परिच्छेद में दण्डी ने काव्य की परिभाषा, काव्य के तीन भेद, सर्गबन्ध महाकाव्य के स्वरूप का वर्णन किया है। इसके बाद वाङ्मय के चार भेद–संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश तथा मिश्र बताये हैं।

द्वितीय परिच्छेद – इसमें सर्वप्रथम अलंकार का लक्षण प्रस्तुत किया है तत्पश्चात् स्वाभावोक्ति, उपमा, रूपक, दीपक, अर्थान्तरन्यास व्यतिरेक, विभावना, समासोक्ति, अप्रस्तुतप्रशंसा, उत्प्रेक्षा उदात्त विरोध, तुल्योगिता, सहोक्ति, परिवृत्ति इत्यादि 35 अलंकारों के सभेद लक्षण और उदाहरण दिए गए हैं।

तृतीय परिच्छेद – तृतीय परिच्छेद में सर्वप्रथम यमक अलंकार का विस्तृत वर्णन किया गया है। तदनन्तर गोमूत्रिका आदि चित्रबन्ध अलंकारों को सोदाहरण प्रस्तुत किया गया है। तत्पश्चात् प्रहेलिकाओं की विवेचना है तथा अन्त में दस प्रकार के दोषों का निरूपण किया गया है।

15.3.4 उद्भट

अलंकार सम्प्रदाय के आचार्यों में भामह के बाद उद्भट का स्थान महत्त्वपूर्ण था। सभी परवर्ती आचार्यों ने उद्भट का उल्लेख आदर के साथ किया है। इनके ग्रन्थ अलंकार–सार–संग्रह तथा भामहविवरण अलंकार सम्प्रदाय के अग्रणी ग्रन्थ थे।

परिचय एवं जीवन वृत – उद्भट कश्मीर के निवासी थे। कल्हण ने अपनी राजतरंगिनी में भट्ट उद्भट विद्वान् का उल्लेख किया है जो राजा जयापीड़ के दरबारी कवि थे। जयापीड का समय आठवीं सदी के उत्तरार्द्ध व नवीं सदी के पूर्वार्द्ध के मध्य निश्चित है। यदि उद्भट वे ही उद्भट थे तो उनका

समय 800 ई0 के लगभग माना जा सकता है परन्तु विद्वानों में इस संदर्भ में मतैक्य नहीं है। प्रायः इनका समय आठवीं व नवमी सदी के बीच ही माना जाता है।

उद्भट की रचनाएँ – उद्भट की तीन कृतियाँ ज्ञात हैं– अलंकारसारसंग्रह, भामह विवरण और कुमारसम्भव। अलंकार सार संग्रह काव्यशास्त्रीय ग्रन्थ है, भामहविवरण आचार्य भामह के काव्यालंकार की टीका है और कुमारसम्भव एक महाकाव्य है। परन्तु आज केवल अलंकार सार संग्रह ही उपलब्ध है।

अलंकारसार संग्रह – उद्भट की यह रचना अलंकार सम्प्रदाय की मूर्धन्य रचनाओं में से एक है। यह ग्रन्थ 6 वर्गों में विभक्त है जिसमें 79 कारिकाएँ हैं। इस रचना में उद्भट ने 41 अलंकारों व 90 उदाहरणों का उल्लेख किया है।

भामह विवरण – यह ग्रन्थ वर्तमान में उपलब्ध नहीं है। प्राचीन ग्रन्थों में इसके अनेक सन्दर्भ मिलते हैं। यह ग्रन्थ भामह के काव्यालंकार पर टीका थी।

कुमार सम्भव – प्राचीन विवरणों से पता चलता है कि उद्भट ने एक कुमारसंभव नामक महाकाव्य की भी रचना की थी जो आज अनुपलब्ध है। प्रतिहारेन्दुराज के अनुसार उद्भट ने अपने ग्रन्थ अलंकारसारसंग्रह में जो उदाहरण लिये हैं वे अपनी रचना कुमारसंभव से ही लिए होंगे। इन उदाहरणों की समीक्षा करने पर पता चलता है कि उद्भट ने यह ग्रन्थ कालिदास के कुमारसंभव के अनुकरण में ही लिखा होगा।

इनके अलावा उद्भट ने नाट्यशास्त्र पर भी एक टीका लिखी थी जो आज उपलब्ध नहीं है।

अलंकार–सार–संग्रह की टीकाएँ – उद्भट के अलंकार सार संग्रह पर दो प्राचीन टीकायें प्राप्त होती हैं– प्रथम प्रतिहारेन्दुराज की अलंकारसारलघुविवृति। द्वितीय राजानक तिलक द्वारा रचित उद्भटविवेक।

उद्भट और अलंकारों की संख्या – उद्भट ने अलंकारों की संख्या 41 मानी है।

15.3.5 रूद्रट

रूद्रट भी अलंकार सम्प्रदाय के प्रमुख आचार्य थे। इन्होंने अलंकारों का वैज्ञानिक विवेचन कर कुछ निश्चित श्रेणियों में विभाजित किया। काव्य में रस की अनिवार्यता को स्वीकार करते हुए भी इन्होंने अलंकारों के प्रामुख्य को प्रतिपादित किया है। इन्होंने अलंकारवादी सम्प्रदाय व ध्वनिसम्प्रदाय के मध्य कड़ी का काम किया।

रूद्रट का परिचय व समय – अनुमानों के आधार पर ज्ञात होता है कि रूद्रट भी कश्मीर के निवासी थे। इनके पिता का नाम भट्ट वामुक था। काव्यालंकार के अनुशीलन से पता चलता है कि ये शैव मतावलम्बी थे। विभिन्न निष्कर्षों की समीक्षा करने पर इनका समय 850 ई0 के लगभग माना जा सकता है। ये आनंदवर्धन के समकालीन थे।

रूद्रट की कृति–काव्यांलकार – रूद्रट का एक मात्र उपलब्ध ग्रन्थ काव्यालंकार है। इसमें 16 अध्याय व 734 पद्य हैं जो आर्या छन्द में हैं।

प्रथम अध्याय में मंगलाचरण के बाद काव्य प्रयोजन व काव्य हेतुओं का वर्णन है। द्वितीय अध्याय में पांचाली आदि रीतियों का वर्णन है। तीसरे अध्याय में यमक तथा चौथे अध्याय में श्लेष अलंकार का वर्णन है। पांचवे अध्याय में विभिन्न चित्रालंकारों का वर्णन है। छठे अध्याय में दोष निरूपण है। सातवें, आठवें, नवें व दसवें अध्याय में अलंकारों का वर्णन है। ग्यारहवें अध्याय में अर्थ दोष वर्णन है। बारहवे से पन्द्रहवें अध्याय तक रस निरूपण है। सोलहवें व अन्तिम अध्याय में काव्य भेदों का वर्णन है।

रूद्रट का महत्त्व – रूद्रट अलंकार सम्प्रदाय के प्रमुख आचार्यों में से एक हैं। इन्होंने काव्य में रस के महत्त्व को जानते हुए भी उसका वर्णन रसवदलंकार के रूप में किया। इन्होंने सर्वप्रथम

अर्थालंकारों के विभाजन का आधार प्रस्तुत किया। इन्होंने कुल 57 अलंकारों का पृथक्–पृथक् रूप से वर्णन किया है। इसके अतिरिक्त रस, रीति, ध्वनि आदि काव्यांगों का वर्णन भी रूद्रट ने किया है। इन्होंने भावलंकार के वर्णन में व्यंग्य अर्थ का प्रतिपादन कर ध्वनि की अभिव्यंजना की है।

काव्यालंकार की टीकाएँ – रूद्रट के काव्यालंकार पर प्रमुख रूप से तीन प्राचीन विद्वानों की टीकाएँ मिलती हैं जो निम्न है–

1. वल्लभदेव की टीका
2. नामिसाधु की टीका
3. आशाधर की टीका

15.3.6 मम्मट

काव्यशास्त्र के आचार्यों में मम्मट का स्थान सबसे ऊपर है। इनका ग्रन्थ काव्यप्रकाश काव्यशास्त्र रूपी नक्षत्रमण्डल का सूर्य माना जाता है। काव्यप्रकाश के अध्ययन के बिना काव्यशास्त्रीय ज्ञान अधूरा माना जाता है। यद्यपि मम्मट मूल रूप से ध्वनिवादी आचार्य थे तथा इन्होंने ध्वनिमत की पुनर्स्थापना की। इसीलिए इन्हें ध्वनिप्रस्थापना–परमाचार्य भी कहा जाता है। तथापि इन्होंने अलंकारों के महत्व का भी यथोचित वर्णन किया है। अतः अलंकार सम्प्रदाय के संदर्भ में भी इनके ग्रन्थ काव्यप्रकाश का अनुशीलन करना न केवल आवश्यक है, अपितु अपरिहार्य है।

परिचय व जीवनवृत – मम्मट ने अपने जीवन के बारे में कुछ नहीं लिखा है तथापि विद्वानों के अनुसार ये कश्मीर के निवासी थे। इनके पिता का नाम जैयट था।

विभिन्न विद्वानों के मतों को ध्यान में रखते हुए इनका समय 1050 से 1100 ई0 के बीच माना जा सकता है।

रचनाएँ :– मम्मट का सर्वप्रमुख ग्रन्थ काव्यप्रकाश है। इसके अलावा मम्मट ने शब्दव्यापारविचार नामक एक अन्य ग्रन्थ की भी रचना की थी।

काव्यप्रकाश – काव्यप्रकाश का काव्यशास्त्रों में सर्वोच्च स्थान है। इसमें 10 उल्लास व कुल 142 कारिकाएँ हैं। कारिकाओं के साथ वृति व उदाहरण भी दिये गये हैं। ग्रन्थ के प्रथम उल्लास में काव्य–प्रयोजन, हेतु, लक्षण व भेदों का संक्षिप्त वर्णन है। दूसरे उल्लास में शब्दशक्तियाँ, तीसरे उल्लास में व्यंजना शब्दशक्ति, चौथे से छठे उल्लास तक काव्य भेदों का विशद् विवेचन है, सप्तम उल्लास में दोष–वर्णन, आठवें उल्लास में गुण–विवेचन है तथा नवम एवं दशम उल्लास में क्रमशः शब्दालंकारों व अर्थालंकारों का वर्णन किया गया है।

मम्मट और अलंकार – जैसा कि पहले कहा जा चुका है कि मम्मट मूलरूप से ध्वनि–सम्प्रदाय के आचार्य माने जाते हैं। तथापि इनके ग्रन्थ काव्यप्रकाश के नवम व दशम उल्लास में अलंकारों का विस्तृत, क्रमबद्ध एवं वैज्ञानिक विवेचन है। इन्होंने अलंकारों के दो प्रमुख भेद किये हैं। शब्दालंकार एवं अर्थालंकार। मम्मट ने अलंकारों के कुल 68 भेदों का वर्णन किया है। इस प्रकार अलंकारों के अध्ययन के क्षेत्र में मम्मट का काव्यप्रकाश पठनीय है।

काव्यप्रकाश पर टीकाएँ – काव्यप्रकाश पर जितनी अधिक टीकायें लिखी गईं उतनी किसी अन्य काव्यशास्त्रीय ग्रन्थ पर नहीं। इनमें दो प्रमुख प्राचीन टीकाएँ रूय्यक तथा माणिक्यचन्द्र की संकेत टीकायें हैं। वर्तमान में प्रायः हिन्दी अंग्रेजी व अन्य सभी भारतीय भाषाओं में काव्यप्रकाश की टीकाएँ लिखी जा चुकी हैं।

15.3.7 रूय्यक

अलंकारवादी आचार्यों में रूय्यक भी प्रमुख थे। इन्होंने पूर्ववर्ती अलंकारवादी आचार्यों के मतों में समन्वय कर व्यवस्थित रूप से अलंकारों का प्रतिपादन किया। भरत व भामह से लेकर मम्मट तक के आलंकारिक वर्णन के समन्वित व संशोधित रूप की इन्होंने विवेचना की। इस प्रकार अलंकार सम्प्रदाय में इनका स्थान मेरूदण्ड के समान रहा।

परिचय व समय – अन्य सभी काव्यशास्त्रीय आचार्यों की भांति रूय्यक भी कश्मीर के निवासी थे। ये मम्मट के उत्तरवर्ती थे। इनके पिता तिलक थे जो इनके गुरू भी थे। रूय्यक का समय 12वीं सदी के मध्य में माना जाता है।

रचनायें – अलंकारसर्वस्व रूय्यक की सबसे प्रसिद्ध रचना है। इसके अतिरिक्त इन्होंने अन्य ग्रन्थों की भी रचना की थी जो निम्न है–

काव्यप्रकाशसंकेतटीका, सहृदयलीला, नाटकमीमांसा, व्यक्तिविवेकविचार, हर्षचरितवार्तिक, साहित्यमीमांसा, श्रीकण्ठस्वत अलंकारानुसारिणी, अलंकारमंजरी, अलंकारवार्तिक। काव्यप्रकाशसंकेत काव्यप्रकाश पर टीका है।

अलंकारसर्वस्व – चूंकि रूय्यक ने काव्यप्रकाश पर टीका लिखी थी अतः रूय्यक के अलंकारसर्वस्व पर मम्मट के अलंकार वर्णन का प्रभाव पड़ना स्वाभाविक था। अतः रूय्यक भी मम्मट की भांति ध्वनिमत के पोषक थे। ग्रन्थ में 28 सूत्र हैं जिनमें विभिन्न काव्यावयवों का वर्णन है।

रूय्यक ने कुल 82 अलंकारों की उद्‌भावना की है। लेखक ने अपने अलंकारों के लगभग उदाहरण काव्यप्रकाश से ही लिये हैं।

अलंकारसर्वस्व पर प्राचीन टीकाएँ – इस ग्रन्थ पर प्रमुख रूप से चार प्रसिद्ध विद्वानों ने टीकायें लिखी हैं– राजानक अलक, समुद्रबन्ध, विद्याचक्रवर्ती और जयरथ।

इनके इलावा परवर्ती सभी आलंकारिकों ने अलंकारसर्वस्व को अपने लेखन का आधार बनाया। जैसे जगन्नाथ, अप्पयदीक्षित, विद्याधर आदि।

15.3.8 जयदेव

जयदेव ने काव्यशास्त्र लेखन के अतिरिक्त काव्यलेखन में भी प्रतिष्ठा प्राप्त की। इनका प्रमुख ग्रन्थ चन्द्रालोक है। इनका अलंकारवादी होना इनके स्वयं के इस वक्तव्य से स्पष्ट होता है जो चन्द्रालोक के पंचम मयूख में है–

"अंगीकरोति यः काव्यं शब्दार्थावनलङ्कृती।
असौ न मन्यते कस्मादनुष्णमनलं कृती।।"

जयदेव का समय – ये मम्मट व रूय्यक के बाद में हुए। इनका समय 1200 ई0 के लगभग माना जाता है।

रचनायें – जयदेव की काव्यशास्त्रीय रचना चन्द्रालोक है। इसके अतिरिक्त इन्होंने अनर्घराघव नामक नाटक की भी रचना की।

चन्द्रालोक – अपनी सरल व सहज शैली के कारण इस ग्रन्थ ने काफी प्रतिष्ठा व लोकप्रियता प्राप्त की। ग्रन्थ में 10 मयूख तथा कुल 350 श्लोक हैं। इनमें सभी काव्य–अवयवों का सांगोपांग वर्णन है। चन्द्रालोक के पांचवे मयूख में विभिन्न अलंकारों का वर्णन किया गया है। ग्रन्थकार ने 4 शब्दालंकार तथा 100 अर्थालंकार कुल मिलाकर 104 अलंकार माने हैं।

ग्रन्थ की विशेषता यह है कि इसमें कवि ने एक ही श्लोक में अलंकारों के लक्षणों व उदाहरणों का समावेश किया है। जिसके कारण यह छात्रोपयोगी है। आगे जाकर अप्पयदीक्षित ने इसी पंचम मयूख को आधार मानकर कुवलयानन्द ग्रन्थ की रचना की।

15.3.9 कविराज विश्वनाथ

साहित्यदर्पण के रचयिता विश्वनाथ काव्यशास्त्रीय विद्वानों में अत्यधिक लोकप्रिय माने जाते हैं। अपने ग्रन्थ साहित्यदर्पण में इन्होंने नाट्यशास्त्रीय एवं काव्यशास्त्रीय दोनों तत्त्वों का समावेश किया है। मम्मटादि आचार्यों के काव्य लक्षणों का खण्डन करते हुए इन्होंने स्वयं का मौलिक लक्षण किया है जो आज सर्वाधिक लोकप्रिय है– वाक्यं रसात्मकं काव्यम्।

अपने ग्रन्थ में इन्होंने अलंकारिकों का अधिक अनुसरण किया है, अतः इनको अलंकार सम्प्रदाय में परिगणित किया जाता है यद्यपि अपने काव्य लक्षण में इन्होंने रस को काव्य की आत्मा माना है।

परिचय व समय – उपलब्ध साक्ष्यों के आधार पर विश्वनाथ उड़ीसा के रहने वाले थे। इनके प्रपितामह का नाम नारायण स्वामी तथा पिता का नाम चन्द्रशेखर था। विश्वनाथ तथा इनके पिता संभवतः किसी राजा के सन्धिविग्रहक के पद पर रहे होंगे। ये वैष्णव मतानुयायी थे।

विभिन्न मतों का विश्लेषण करने के पश्चात् हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि इनका समय 14वीं सदी माना जाता है।

रचनायें – विश्वनाथ की प्रमुख रचना साहित्यदर्पण है। इसके अलावा इन्होंने निम्न ग्रन्थों की भी रचना की– राघवविलासमहाकाव्य, कुलवयाश्वचरित, प्रभावती परिणय, चन्द्रकला, प्रशस्तिरत्नावली, काव्यप्रकाशदर्पण व नरसिंह विजय।

साहित्यदर्पण – 10 परिच्छेदों वाले इस विशाल ग्रन्थ में काव्य के सभी अंगों का विस्तृत विवेचन है। प्रथम परिच्छेद में काव्य प्रयोजन, लक्षण, दोष, गुणादि का वर्णन है। द्वितीय परिच्छेद में शब्दशक्तियाँ, तृतीय परिच्छेद में व्यंजना वृति, षष्टम परिच्छेद में अन्य काव्य–भेद, सप्तम परिच्छेद में दोष, अष्टम परिच्छेद में गुण वर्णन, नवम परिच्छेद में रीति वर्णन तथा दशम परिच्छेद में अलंकार वर्णन है।

विश्वनाथ और अलंकार – विश्वनाथ के आलंकारिक वर्णन पर रूय्यक का अत्यधिक प्रभाव है। अपने ग्रन्थ के 10वें परिच्छेद में इन्होंने विभिन्न अलंकारों का वर्णन किया है।

साहित्यदर्पण पर प्राचीन टीकायें – साहित्य दर्पण की प्रमुख टीकायें निम्न हैं– अनन्तदास की लोचन टीका, रामचरण की विवृति टीका, मथुरानाथ शुक्ल की टिप्पण टीका, गोपीनाथ की प्रभा टीका और माहेश्वर भट्ट की विज्ञप्रिया टीका।

15.3.10अप्पय दीक्षित

उत्तरवर्ती काव्यशास्त्रियों में अप्पय दीक्षित का स्थान अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है। इनका ग्रन्थ कुवलयानन्द अलंकार सम्प्रदाय का प्रमुख ग्रन्थ है। इन्होंने काव्य के दो अंगों की विशद् विवेचना की है। प्रथम वृतियाँ और द्वितीय अलंकार। ये न केवल काव्यशास्त्र के ज्ञाता थे अपितु वेदान्त, मीमांसा, व्याकरण आदि अन्य विषयों पर आपने अनेक ग्रन्थों की रचना की।

परिचय व जीवन वृत – विद्वानों के अनुसार अप्पय दीक्षित विजयनगर के राजा वेंकटपति के समकालीन थे। इनका समय 16वीं, 17वीं सदी के बीच तय होता है। इनके पिता का नाम रंगराज व पितामह का नाम आचार्य दीक्षित माना जाता है। ये भारद्वाज कुल में पैदा हुए।

रचनायें – अप्पय दीक्षित विविध क्षेत्रों में लेखन प्रतिभा के धनी थे। इनके ग्रन्थों की कुल संख्या 204 मानी जाती है। जिनमें दार्शनिक, भक्तिपरक व व्याकरण विषयक ग्रन्थ हैं। इन्होंने तीन प्रमुख

आलंकारिक ग्रन्थों का प्रणयन किया– वृतिवार्तिक, चित्तमीमांसा व कुवलयानन्द। इनमें से प्रथम दो ग्रन्थ अपूर्ण प्रतीत होते है।

वृत्तिवार्तिक – इस ग्रन्थ में दो परिच्छेद हैं जिनमें शब्दशक्तियों का वर्णन है।

चित्रमीमांसा – इस ग्रन्थ में दीक्षित जी ने काव्य के तीन भेद तथा अर्थालंकारों का वर्णन किया है।

कुवलयानन्द – यह अप्पय दीक्षित का प्रमुख काव्यग्रन्थ है। इस ग्रन्थ की रचना जयदेव के चन्द्रालोक को आधार मानकर की गई है। भरतमुनि ने जहाँ केवल चार अलंकारों का वर्णन किया है। वहीं अप्पय दीक्षित के समय तक इनकी संख्या 125 तक पहुंच गई। अप्पय दीक्षित का यह ग्रन्थ अलंकार सम्प्रदाय का सर्वाधिक उत्तरवर्ती लोकप्रिय ग्रन्थ है।

कुवलयानन्द की टीकाएँ – कुवलयानन्द पर प्रमुख टीकाएँ इस प्रकार है– वैद्यनाथ तत्सत् की अलंकारचन्द्रिका टीका, नागेशभट्ट की अलंकारसुधा टीका, आधाधर भट्ट की कारकदीपिका टीका, गंगाधर की रसिकरंजनी टीका आदि।

अन्य अलंकारवादी आचार्य – इन सबके अतिरिक्त अन्य भी कई प्रसिद्ध आचार्य हुए जिन्होंने काव्य में अलंकार को प्रमुख माना है। यथा विद्याधर इनका प्रमुख ग्रन्थ एकावली है। इसमें 8 उन्मेष हैं। जिनमें अन्तिम दो उन्मेषों में विविध अलंकारों का वर्णन है।

केशवमिश्र – इनकी काव्यशास्त्रीय कृति का नाम अलंकारशेखर है जो 8 रत्नों व 22 मरीचियों में विभक्त है।

कर्णपूर – इनकी प्रमुख रचना 'अलंकारकौस्तुभ' है। यह ग्रन्थ 20 किरणों में विभक्त है। ग्रन्थ की सातवीं व आठवीं किरणों में शब्दालंकारों व अर्थालंकारों का वर्णन किया गया है।

15.4 बोध प्रश्न

15.4.1 वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. अलंकार सम्प्रदाय के स्थापक आचार्य हैं ?
   (क) भामह (ख) दण्डी
   (ग) विश्वनाथ (घ) मम्मट ( )
2. काव्यशोभाकरान्, धर्मानलंकारान्, प्रचक्षते? यह काव्य लक्षण किस आचार्य का है?
   (क) दण्डी (ख) विश्वनाथ
   (ग) मम्मट (घ) भामह ( )
3. नाट्यशास्त्र के रचयिता कौन हैं?
   (क) भरत (ख) भामह
   (ग) दण्डी (घ) वामन ( )
4. ''अलंकारसारसंग्रह'' ग्रन्थ के रचयिता हैं?
   (क) दण्डी (ख) भामह
   (ग) उद्भट (घ) रूद्रट ( )
5. काव्यप्रकाश के रचयिता हैं?
   (क) आनन्दवर्धन (ख) महिमभट्ट
   (ग) विश्वनाथ (घ) मम्मट ( )

15.4.2 लघूत्तरात्मक प्रश्न–

प्रस्तुत प्रश्नों के उत्तर भूमिका भाग तथा अंक कथावस्तु में देखे जा सकते हैं।

1. निम्न ग्रन्थों के रचनाकारों के नाम लिखो?

   काव्यालंकार – ....

   काव्यप्रकाश – ....

   अलंकारसारसंग्रह – ....

   चन्द्रालोक – ....

   अलंकारसर्वस्व – ....

2. साहित्यदर्पण का लेखक कौन है?

   ____

   ____

3. आचार्य दण्डी के ग्रन्थ का क्या नाम है?

   ____

   ____

4. अप्पय दीक्षित के ग्रन्थ का नाम बताइये?

   ____

   ____

5. आचार्य मम्मट का साहित्य के किस क्षेत्र में योगदान है?

   ____

   ____

उत्तर – वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. (क)
2. (क)
3. (क)
4. (ग)
5. (घ)

उत्तर लघुत्तरात्मक प्रश्न–

1. (1) भामह, (2) मम्मट, (3) उद्भट (4) जयदेव,(5) रूय्यक
2. आचार्य कविराज विश्वनाथ
3. काव्यादर्श
4. कुवलयानन्द
5. ध्वनि की स्थापना

15.5 उपयोगी पुस्तकें

1. अलंकारशास्त्र का इतिहास– पी0वी0 काणे
2. अलंकारशास्त्र का इतिहास, डॉ0 कृष्ण कुमार, साहित्य भण्डार, मेरठ
3. भारतीय साहित्यशास्त्र भाग एक एवं दो, आचार्य बलदेव उपाध्याय, चौखम्बा प्रकाशन, वाराणसी
4. संस्कृत आलोचना, बलदेव उपाध्याय, चौखम्बा प्रकाशन, वाराणसी
5. भारतीय संस्कृतशास्त्र और काव्यालंकार, डॉ0 भोलाशंकर व्यास, चौखम्बा प्रकाशन, वाराणसी।

————————

इकाई 16

संख्या षोडश

16.0 उद्देश्य

कोटा खुला विश्वविद्यालय के संस्कृत भाषा का पाठ्यक्रम (बी0ए0 प्रथम वर्ष) के लिए इकाई संख्या 16 के अन्तर्गत ''प्रमुख अलंकारों के लक्षण एवं उदाहरण का परिचय'' प्रस्तुत किया गया है। इस इकाई का अध्ययन करने के बादः

1. छात्र अलंकारों के विषय में जानकारी प्राप्त करेंगे।
2. प्रमुख अलंकारों का ज्ञान प्राप्त करेंगे।
3. अलंकार के लक्षण जानकर किसी पद्य में अलंकारों की निश्चितता तय कर सकेंगे।
4. काव्य की अलंकार शैली से परिचित हो सकेंगे।

16.1 प्रस्तावना

संस्कृत साहित्य व काव्यों के अध्ययन के लिए काव्य के निर्धारक तत्त्वों का अध्ययन जरूरी है। काव्य के निर्धारक तत्त्वों में अलंकार एक प्रमुख तत्त्व है। जिस प्रकार आभूषण–सौन्दर्य में वृद्धि करते हैं उसी प्रकार अलंकार काव्य के सौन्दर्य को बढ़ाते हैं। यहाँ पर काव्यसौन्दर्यवर्धक इन अलंकारों के प्रमुख प्रकारों का सोदाहरण विवेचन किया गया है।

16.2 प्रमुख अलंकारों के लक्षण व उदाहरण

16.2.1 अनुप्रासः –

अनुप्रासः शब्दसाम्यं वैषम्येऽपि स्वरस्य यत्

अर्थ – स्वरों की असमानता होने पर भी केवल व्यंजनों की समानता ही अनुप्रास है।

उदा0–1 **भारते भातु भारती**

उदा0–2 **लताकुंज गुंजन् मदवदलिपुंज चपलयन्**
समालिंगं द्रुततरमनंग प्रबलयन्।
मरून्मन्दं मन्दं दलितमरविन्दं तरलयन्
रजो विन्दं विन्दन् किरति मकरन्दं दिशि दिशि।।

अर्थ – लताओं के कुंज को गुंजरित करने वाले मतवाले भ्रमर समूह को चंचल और अंगों को आलिंगन करता हुआ, काम को शीघ्र वधित करता हुआ और विकसित कमलों को चंचल बनाता हुआ अर्थात् हिलाता हुआ धूलि समूह को ग्रहण कराता हुआ वायु धीरे–धीरे सभी दिशाओं में पुष्परस को फैला रहा है।

प्रस्तुत पद्य में अनुप्रास अलंकार है। क्योंकि यहाँ व्यंजनों की आवृत्ति हुई है। जैसे प्रथम पाद में 'ञजं' की द्वितीय में 'ङ्गम्' की तृतीय एवं चतुर्थ पाद में न्दं की आवृत्ति है। अतः परिभाषानुसार व्यंजनों की पुनरावृत्ति होने के कारण यहाँ अनुप्रास अलंकार है।

16.2.2 यमक

लक्षण–

सत्यर्थे पृथगर्थायाः स्वरव्यंजनसंहतेः।
क्रमेण तैनैर्वावृत्तिर्यमकं विनिगद्यते।।

सार्थक किन्तु श्रभार्थ स्वर व्यंजन समूह की उसी क्रम में आवृत्ति को यमक कहा जाता है।

यह स्वर व्यंजन समूह की कहीं सार्थक होता हैं, कहीं निरर्थक कहीं दोनों सार्थक व कहीं दोनों निरर्थक, कहीं एक सार्थक और एक निरर्थक होता है जैसा की निम्न उदाहरण से स्पष्ट है–

उदा0–

नवपलाश पलाशवनं पुरः स्फुटपरागपरागतपंकजम्।
मृदुलतान्त लतान्तमलोकयत् स सुरभिं सुरभिं सुमनोभरैः।।

अर्थ– उसने नवीन पत्तों वाले पलाश (ढाक) वन को व्यक्त स्पष्ट पुष्पराज से व्याप्त कमल को कोमल और मुर्झाये लता समूह को, पुष्पसमूह से सुगन्धित वसन्त ऋतु को सामने देखा। यह श्लोक माघ कवि द्वारा रचित है, यहां 'स' का अर्थ श्रीकृष्ण है।

प्रस्तुत पद्य के प्रथम पाद में पराग–पलाश की आवृत्ति है दोनों की सार्थक हैं। द्वितीय पाद में पराग–पराग की आवृत्ति है प्रथम पराग (पुष्पराज) सार्थक है जबकि द्वितीय पराग परागत का अंश होने से निरर्थक है।

तृतीय पाद में लतान्त, लतान्त की आवृत्ति में प्रथम लतान्त मृदुलतान्त का अंश होने से निरर्थक है जबकि द्वितीय लतान्त (लता का अग्र भाग) सार्थक है। चतुर्थ पाद में सुरभि (सुगन्धित) सुरभि (वसन्त ऋतु) दोनों ही सार्थक हैं। यहीं रभिंसु रभिंसु की भी आवृत्ति हो रही है दोनों ही निरर्थक हैं।

16.2.3 श्लेष अलंकार

''श्लिष्टैः पदैरनेकार्थाभिधाने श्लेष उच्यते।''

अर्थ – श्लिष्ट पदो ंके द्वारा अनेक अर्थों का कथन श्लेष अलंकार कहलाता है।

उदा0

प्रतिकूलतामुपगते हि विधौ विफलत्वमेति बहुसाधनता।
अवलम्बनाय दिनभर्तुरभून्न पतिष्यतः करसहस्रमपि।।

अर्थ – विधु–चन्द्रमा अथवा विधि–भाग्य के प्रतिकूल होने पर अनेक साधन सम्पन्नता भी व्यर्थ हो जाती है। सायंकाल अस्त होते समय अथवा डूबते समय सूर्य के अवलम्बन (सहारा) देकर बचाने के लिए उसके हजार हाथ (किरणें) भी सहायक न हो सकें अर्थात् भाग्य के प्रतिकूल होने पर सूर्य के हजार हाथ भी उसे डूबने से बचा न सके।

उपर्युक्त पद में 'विधौ' तथा 'कर' में वर्ण श्लेष है। 'विधौ' इस पद में विधि शब्द और विधु शब्द के सप्तमी एकवचन में इकार और उकार वर्णों के स्थान में औकार के रूप हो जाने से वर्ण श्लेष है। इसलिए इसका अर्थ विधि (भाग्य), विधु (चन्द्रमा) भी है।

'कर' में प्रकृति श्लेष है। क्योंकि 'कर' प्रकृति एक के ही दो अर्थ हैं – हाथ एवं किरण। अतः यहाँ श्लेष है।

उदा0

पृथुकार्तस्वरपात्रं भूषित निःशेषपरिजनं देव।
विलसत् करेणु गहनं सम्प्रति सममावयोः सदनम्।।

यहाँ प्रस्तुत पद्य में एक भिक्षुक अपनी दीनता व राजा की सम्पन्नता का वर्णन एक ही पद में इस प्रकार कर रहा है –

हे महाराज इस समय हम दोनों के घर की एक समान अवस्था है – आपके यहाँ सोने के बड़े बड़े पात्र हैं, समस्त परिजन आभूषणों से अलंकृत हैं एवं विलास करती हुई हथनियों से घर व्याप्त है वहीं मेरा घर बच्चों के आर्त स्वर का पात्र बना हुआ है, मेरे घर में समस्त परिजन भूमि पर ही उठते बैठते हैं, एवं मेरा घर चूहों के बिल खोदने की धूलि से व्याप्त है।

उपर्युक्त पद्य में पदश्लेष है क्योंकि यहाँ एक एक पद के दो अर्थ हैं। साथ ही यहाँ समंग श्लेष भी है क्योंकि पदों के दो भिन्न प्रकार से विभक्त करने पर ही दो भिन्न अर्थों की प्रतीति होती है। जैसे –

पृथुकार्तस्वरपात्रं (पृथुक+आर्तस्वरपात्रं) अनाथ बच्चों के क्रन्दन स्वर का पात्र बना हुआ है।

(पृथु + कार्तस्वरपात्रं) सोने के बड़े बड़े बर्तनों से व्याप्त है।

भूषितानः शेषपरिजनं (भू+उषित निःशेष परिजनं) भूमि पर ही समस्त परिजन उठते व बैठते हैं। (भूषित + निःशेषपरिजनं) समस्त परिजन अलंकारों से अलंकृत रहते हैं।

विलसत्करेणु गहनं (विलसत्क + रेणु गहनम्) चूहों के बिल बनाने की धूलि से

(विलसत् + करेणु गहनम्) विलास करती दृशनियों से व्याप्त हैं।

इस भाँति यहाँ तीनों ही पदों के दो–दो अर्थ होने से पदश्लेष है।

16.2.4 स्वाभावोक्ति अलंकार

स्वाभावोंक्तिरसौ चारू, यथावद् वस्तु वर्णनम्''

अतिशय चमत्कार के साथ वस्तुओं का ज्यों का त्यों वर्णन करना स्वाभावोक्ति अलंकार कहलाता है।

उदाहरण –

ग्रीवाभङ्गभिरामं मुहुरनुपतति स्यन्दने दत्तदृष्टिः।
पश्चार्द्धेन प्रविष्टः शरपतनययाद् भूयसा पूर्वकायम्।।
शष्पैरद्धविलीढैः श्रमविवृतमुखभ्रंशिभिः कीर्णवर्त्या।
पश्योदग्रप्लुतत्वाद् वियति बहुतरं स्तोकमुर्व्यां प्रयाति।।

सुन्दरता से गर्दन मोड़ता हुआ, बार बार रथ पर दृष्टि लगाये हुए है, बाण लगने के भय से शरीर के पिछले भाग से पूर्व शरीर में प्रविष्ट हुआ सा, परिश्रम के कारण खुले हुए मुख से गिरते हुए अर्द्धचर्वित घास से जिसका मार्ग व्याप्त हो गया है, ऊँचा उछलने के कारण वह आकाश में अधिक पृथ्वी पर कम चल रहा है।

यहाँ भयभीत मृग की क्रियाओं का चमत्कारिक ढंग से यथावत् वर्णन होने से स्वाभावोक्ति अलंकार है।

16.2.5 वक्रोक्ति अलंकार

लक्षण–

यदुक्तमन्यथा वाक्यमन्यथाऽन्येन योज्यते।
श्लेषेण काक्वा वा ज्ञेया सा वक्रोक्तिस्तथा द्विधा।।

अर्थात् जो वक्ता द्वारा अन्य प्रकार से अन्य अर्थ में कहा हुआ वाक्य दूसरे अर्थात् बौद्धा या श्रोता के द्वारा श्लेष अथवा काकु (बोलने का लहजा) से अन्य प्रकार से अर्थात् वक्ता के अभिप्राय से भिन्न अर्थ में लगा लिया जाता है। वह वक्रोक्ति नामक अलंकार होता है। इसके श्लेष वक्रोक्ति और काकु वक्रोक्ति दो भेद हैं।

उदा0–

अहो केनेदृशी बुद्धिर्दारूणा तव निर्मिता।
त्रिगुणा श्रूयते बुद्धिर्न तु दारूमयी क्वचित्।।

अर्थ – आश्चर्य है किस दारूण=निर्दय ब्रह्मा ने तुम्हारी इस प्रकार की निर्दय कठोर बुद्धि बनाई है। यहां वक्ता ने दारूणा पद का प्रयोग कठोर अर्थ में किया है। परन्तु दूसरा व्यक्ति दारू अर्थात् काष्ठ रूप ग्रहण कर कहता है कि यह बुद्धि तीन गुणों (सत्त्व, रज, तम) से बनी है।

16.2.6 उपमा अलंकार

प्रस्फुटं सुन्दरं साम्यं उपमेत्यभिधीयते

अत्यधिक स्पष्ट एवं सुन्दर समानता को उपमा कहा जाता है। इस अलंकार के चार अंग होते है–

उपमेय – जिस वस्तु का वर्णन किया जा रहा है।

उपमान – उपमेय वस्तु की जिससे समानता बतायी जाती है।

साधारण धर्म – उपमेय एवं उपमान के मध्य समानता को साधारण धर्म कहा जाता है।

वाचक शब्द – समानता का कथन करने वाले इत, यथा इत्यादि शब्द वाचक शब्द कहलाते हैं।

जैसे उसका मुख कमल के समान सुन्दर है। यहाँ मुख उपमेय, कमल उपमान, समान वाचक शब्द एवं सुन्दर साधारण धर्म है।

उदाहरण – **क्षणात् प्रबोधमायाति लङ्घयते तमसा पुनः।**
निर्वास्यतः प्रदीपस्य शिखेव जरतो मतिः।।

वृद्ध व्यक्ति की बुद्धि बुझते हुए दीपक की शिखा के समान क्षणभर में जागृत होती है और क्षणभर में अंधकार से आवृत्त हो जाती है। वृद्ध की मति भी कभी चेतनायुक्त होती है और कभी अज्ञानावृत हो जाती है।

इस पद्य में बुझते हुए दीपक की शिखा उपमान है तथा वृद्ध की मति उपमेय है। 'आयाति' एवं 'लङ्घयते' इन दोनों क्रियाओं की उपमेय एवं उपमान दोनों में समानता है अतः उपमा अलंकार है।

16.2.7 रूपक अलंकार

लक्षण–

''तद्रूपकमभेदो य उपमानोपमेययोः''

जहाँ पर उपमान तथा उपमेय में अभेद सम्बन्ध ज्ञात हो वहाँ रूपक अलंकार होता है।

उदा0

पर्याप्तपुष्पस्तवकस्तनाभ्यः

स्फुरत्प्रवालोष्ठ मनोहराभ्यः।

लतावधूभ्यस्तरवोऽप्यवापर –

विनम्रशाखा भुजबन्धानि'' (कुमारसम्भवम्)

अर्थ – प्रभूत पुष्पों के गुच्छों रूप स्तनों वाली, खिले हुए प्रवाल रूप ओठों से मनोरम लगने वाली, लता रूप वधुओं से वृक्षों ने भी झुकी हुई शाखा रूप भुजाओं द्वारा आलिंगनों को प्राप्त किया।

इस पद्य में लता पर नायिका का आरोप होने के कारण रूपक अलंकार है।

16.2.8 उत्प्रेक्षा अलंकार

लक्षण–

''सम्भावनमथोत्प्रेक्षा प्रकृतस्य समेन यत्''

जहां पर उपमेय का उपमान के साथ तुलना करते समय सम्भावना प्रकट कि जाये वहाँ उत्प्रेक्षा अलंकार होता है।

उदा0

लिम्पतीव तमोऽङ्गानि

वर्षतीवाञ्जनं नभः।

असत्पुरूषसेवेव

दृष्टिर्विफलतां गता।।

अर्थ – अन्धकार मानो अंगों को लिप्त कर रहा है। आकाश मानो अंजन की वर्षा कर रहा है। दुष्ट पुरूष की सेवा के समान दृष्टि विफलता को प्राप्त हो रही है। अर्थात् जिस प्रकार दुष्ट पुरूष की सेवा निष्फल होती है उसी प्रकार अन्धकार में दृष्टि निष्फल हो रही है।

इस पद्य में असत्पुरूष उपमेय है तथा दृष्टि उपमान है यहाँ पर विफलता की संभावना दिखाई गई है अतः यहाँ उत्प्रेक्षा अलंकार है।

16.2.9 अतिशयोक्ति अलंकार

लक्षण–

सिद्धत्वेऽध्यवसायस्यातिशयोक्तिर्निगद्यते। (साहित्यदर्पण)

अर्थात् अध्यवसाय के सिद्ध या निश्चित रूप से प्रतीत होने पर अतिशयोक्ति अलंकार होता है। अर्थात् उपमेय में उपमान के आरोप को अतिशयोक्ति कहते हैं।

उदा0

अकालजलदावली किरतु नाममुक्तावली

अपर्वणि विधुन्तुदस्तुदतु हन्त शीतद्युतिम्।

इदं तु महदद्भुतं यदनपायि विद्युल्लता

ऽवलम्बि कनकाचलहयमद्योमुखं नृत्यति।।

अर्थ – भले ही असमय की मेघमाला मुक्ताओं की वर्षा करे, अपूर्व अर्थात् पूर्णिमा के अतिरिक्त तिथि में भले ही राहु चन्द्र को व्यथित करे, परन्तु यह तो महान् आश्चर्य का विषय है कि सदा अस्थिर रहने वाली विद्युत रूपी लता में लटकते हुए को कनकाचल सुमेरू पर्वत नीचे को मुख किए हुए नाच रहे हैं। यहां केश आदि उपमेयों का जलदावली आदि उपमानों के रूप में अध्यवसाय हो रहा है। अतः अतिशयोक्ति है।

16.2.9 विभावना अलंकार

लक्षण –

''विभावना विना हेतु कार्योत्पत्तिर्तदुच्यते।''

जहाँ पर कारण के बिना कार्य की उत्पत्ति हो जाए, वहाँ विभावना अलंकार होता है।

उदा0

अपमेघोदयं वर्षमदृष्टकुसुमं फलम्।

अतर्कितोपपन्नं वो दर्शनं प्रतिभाति मे।।

अर्थ – बिना किसी सम्भावना के प्राप्त आपका यह दर्शन मुझे बिना मेघ की वृष्टि तथा बिना पुष्प के फल के समान प्रतीत होता है। तात्पर्य यह है कि वर्षा होने का कारण मेघों का उदित होना तथा फल आने का कारण पुष्पों का आना होता है। इन कारणों के न होने पर भी जो यहाँ बिना मेघों के वर्षा का होना और बिना फूलों के फलों का आना बताया गया है। इससे यहाँ विभावना अलंकार है।

इस पद्य में बिना बादल के वर्षा तथा बिना पुष्प के फल की तरह असमय में ऋषियों का आना विना हेतु का कार्य की उत्पत्ति को दर्शाता है अतः यहाँ विभावना अलंकार है।

16.2.11 विशेषोक्ति अलंकार

लक्षण–

सति हेतौफलाभावे विशेषोक्तिस्त्रिधा च सा।

उक्त्यनुक्त्योर्निमित्तस्थाप्यचिन्त्यत्वे च कुत्रचित्।।

अर्थ– कारण के होते हुए भी फल का न होना ही विशेषोक्ति है। यह तीन प्रकार का होता है–

1. **उक्तनिमित्ता**
2. **अनुक्तनिमित्ता**
3. **अचिन्त्यनिमित्ता**

उदा0

धनिनोऽपि निरून्मादा युवानोऽपि च चंचलाः।

प्रभवोऽप्यप्रमत्तास्ते महामहिमशालिनः।।

अर्थ – महामहिमशाली जन धनी होकर भी उन्माद से रहित होते हैं युवक होकर भी चंचल नहीं होते और सामर्थ्यशाली होने पर भी प्रमाद युक्त नहीं होते क्योंकि वे बड़ी महिमा से शोभायमान हैं।

इस पद्य में धन आने पर उन्माद का होना स्वाभाविक होता है जिसका अभाव दिखाया गया है, युवावस्था में चंचलता का होना स्वाभाविक है तथा अधिकार प्राप्त करने पर अहंकार का होना स्वाभाविक होता है। परन्तु इन सब का अभाव महानव्यक्ति का लक्षण है: अतः कारण होते हुए कार्य का अभाव दिखाने के कारण विशेषोक्ति अलंकार है।

16.2.12 दृष्टान्त अलंकार

लक्षण–

"दृष्टान्तु सधर्मस्य वस्तुनः प्रतिबिम्बनम्।"

अर्थ – समान धर्म वाले वस्तु के बिम्ब–प्रतिबिम्ब भाव को दृष्टान्त अलंकार कहते हैं।

उदा0

त्वयि दृष्ट एव तस्या निर्वाति मनो मनोभवज्वलितम्

आलोके हि हिमांशोर्विकसति कुसुमं कुमुदवत्याः।।

अर्थ– तुमको देखते ही उस नायिका का काम से सन्तप्त ह्रदय शान्त हो जाता है इसके लिए दृष्टान्त देते हैं कि चन्द्रमा को देखने पर कुमुदिनी का फूल खिल उठता है। प्रस्तुत पद्य में उपमेय व उपमान का समान धर्म वाले वस्तु से बिम्ब प्रतिबिम्ब भाव होने से दृष्टान्त अलंकार है।

16.2.13 सन्देह अलंकार

लक्षण –

"सन्देहः प्रकृते अन्यस्य संशयः प्रतिभोत्थितः।"

अर्थ – कवि की प्रतिमा से उत्पन्न उपमेय में उपमान की शंका संदेह अलंकार है।

उदा0

अयं मार्तण्डः किं?स खलु तुरगैः सप्तभिरितः
कृशानुः किं?सर्वाः प्रसरति दिशौ नैष नियतम्।
कृतान्तः किं?साक्षान्महिषवाहनोऽसाविति चिरं
समालोक्याजौ त्वां विदधति विकल्पान् प्रतिभटाः।.

अर्थ – युद्ध करते हुए किसी राजा के पराक्रम का वर्णन करता हुआ कवि कहता है कि क्या यह सूर्य है?यह सूर्य नहीं हो सकता क्योंकि वह सप्त अश्वों से चलता है क्या यह अग्नि है? नहीं यह अग्नि नहीं हो सकती क्योंकि अग्नि तो सभी दिखाओं में फैलती है और इसकी दिशा निश्चित है। क्या यह साक्षात् यम है? नहीं यह यम नहीं है क्योंकि वह सदा भैंसे पर सवार होकर चलता है। इस प्रकार हे राजन! युद्ध में आपको देखकर शत्रु योद्धा अनेक प्रकार की कल्पनाएं करते हैं। यहाँ राजा उपमेय है, सूर्य, अग्नि तथा यम उपयान है।

प्रस्तुत श्लोक में उपमेय पर उपमानगत सन्देह होने के कारण सन्देह अलंकार है।

16.2.14 भ्रान्तिमान अलंकार

साम्यादतस्यिंस्तद् बुद्धि भ्रान्तिमान् प्रतिभोत्थितः

समानता के कारण अतद्वस्तु (उपमेय) में तद्वस्तु (उपमान) की भ्रान्ति हो जाए तो वह भ्रान्तिमान अलंकार है। किन्तु यह भ्रम कवि की प्रतिभाजन्य होना चाहिए।

'शुक्तिकायां रजतम्' सीप में चाँदी की भ्रांति होना यहाँ भ्रान्ति तो है लेकिन कविकल्पनाजन्य न होने से यहाँ अलंकार नहीं है।

महाराज 'श्रीमन्' जगति यशसा ते धवलिते,
पयः पारावांर परमपुरूषोऽयं मृगयते,
कपर्दी कैलासं करिवरमथायं कलिशमृत्,
कलानाथ राहुः कमलमबनो हंसमधुना।

हे महाराज भोज आपके यश से समस्त संसार सफेद हो गया है परमपुरूष विष्णु अपने क्षीरसागर को, शिव कैलाश पर्वत को, इन्द्र ऐरावत हाथी को राहु चन्द्रमा को एवं ब्रह्मा हंस को ढूंढ रहे हैं।

प्रस्तुत पद्य में भोजराज के यश से सम्पूर्ण संसार के धवल हो जाने से परमपुरूषादि को समुद्र, कैलाश, ऐरावत, चन्द्र तथा हंस का भ्रम हो रहा है। अतः यहाँ भ्रान्तिमान अलंकार है।

16.2.15 अर्थान्तरन्यास अलंकार

लक्षण–

सामान्यं वा विशेषो वा तदन्येव समर्थ्यते।
यत्र सोऽर्थान्तरन्यासः साधर्म्येणेतरेण वा।।

सामान्य का विशेष से या विशेष का सामान्य से या साधर्म्य का वैधर्म्य से वैधर्म्य का साधर्म्य से जब समर्थन कराया जाए तो वहाँ अर्थान्तरन्यास अलंकार होता है। जैसे –

उदा0

वृहत्सहायः कार्यान्तं क्षोदीयानपि गच्छति।
सम्भूयाम्भोधिमभ्येति महानद्या नगापगा।।

अर्थ – महान व्यक्ति की सहायता से छोटा व्यक्ति भी अपने कार्य को सिद्ध कर लेता है जिस तरह छोटी–छोटी नदियाँ बड़ी नदी के साथ समुद्र के साथ जा पहुंचती हैं।

यहां प्रस्तुत उदाहरण में श्लोक के द्वितीय अर्धभाग विशेष अर्थ के द्वारा प्रथमार्धगत भाव सामान्य अर्थ का साधर्म्य रूप से समर्थन किया गया है। अतः यहाँ अर्थान्तरन्यास अलंकार है।

16.4 बोध प्रश्न

प्रस्तुत प्रश्नों के उत्तर भूमिका भाग तथा अंक कथावस्तु में देखे जा सकते हैं।

1. अनुप्रास अलंकार का लक्षण लिखो?

2. सत्यर्थेपृथगर्थाया............ यह लक्षण किस अलंकार का है?

3. नवपलाशपलाशवनं पुर..........। इस पद्य में कौनसा अलंकार है?

4. उपमा अलंकार का उदाहरण लिखो?

5. 'मुखचन्द्रम' और'चन्द्रमिव मुखम' इन दोनों पदों में कौनसा–कौनसा अलंकार है?

6. रूपक अलंकार का लक्षण लिखो?

7. उत्प्रेक्षा अलंकार का उदाहरण लिखा?

8. दो वस्तुओं में सन्देह होने पर कौनसा अलंकार होता है?

9. कारण के रहने पर भी कार्य न होने पर कौनसा अलंकार होता है ?

10. विभावना का लक्षण लिखो?

16.5 उपयोगी पुस्तकें

1. काव्यशास्त्र मम्मटप्रणीतम– आचार्य विश्वेश्वर
2. चन्द्रालोक–जयदेव
3. काव्यदीपिका – अष्टम शिखा
4. काव्यादर्श–दण्डी
5. साहित्यदर्पण–विश्वनाथ

उत्तर बोध प्रश्न

1. ''अनुप्रासः शब्दसाम्यं वैषम्यापि स्वरस्थ यत्''
2. यमक अलंकार का
3. यमक अलंकार
4. क्षणात् प्रबोधमायाति लङ्घयते तमसा पुनः।
   निर्वास्यतः प्रदीपस्य शिखेव जरतो मतिः।।
5. मुखचन्द्रम् में रूपक अलंकार है तथा 'चन्द्रमिव मुखम्' में उपमा–अलंकार है।
6. तद्रूपकमभेदो य उपमानोपमेययोः
7. लिम्पतीव तमोङ्गानि
   वर्षतीवांजनं नभः।
   असत्पुरूषसवैव
   दृष्टिर्विफलतां गता।।
8. सन्देह अलंकार
9. विशेषोक्ति अलंकार
10. विभावना विना हेतुं कार्योत्पनिर्यदुच्यते।

———————